The Banyan Tree Journal
(An Open Access Peer-reviewed Multidisciplinary Journal)
Annual Journal, No. 2, June 2026 : 123-136
ISSN No. : 3108-0863
www.jtgdc.ac.in/journals

वाल्मीकीय रामायण में गंगा : दार्शनिक एवं सांस्कृतिक विमर्श

डॉ. सुमन लता*

सार

भारतीय संस्कृति में गंगा केवल एक नदी नहीं, बल्कि धर्म, दर्शन, संस्कृति और लोकजीवन की अखण्ड जीवनधारा के रूप में प्रतिष्ठित है। *वाल्मीकीय रामायण* में गंगा का स्वरूप बहुआयामी रूप में अभिव्यक्त हुआ है। प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य *वाल्मीकीय रामायण* में वर्णित गंगा के धार्मिक, दार्शनिक एवं सांस्कृतिक स्वरूप का विश्लेषणात्मक अध्ययन करना है। सामान्यतः गंगावतरण की कथा को केवल पौराणिक आख्यान के रूप में देखा जाता है, किन्तु इस अध्ययन में यह प्रतिपादित किया गया है कि वाल्मीकि ने गंगा को केवल एक पवित्र नदी के रूप में नहीं, बल्कि धर्म, लोककल्याण, तप, त्याग, मोक्ष, नैतिकता तथा सांस्कृतिक एकात्मता के प्रतीक के रूप में चित्रित किया है। गंगा का त्रिपथगा स्वरूप दैवी, लौकिक तथा आध्यात्मिक जगत के समन्वय का द्योतक है। भगीरथ का तप, शिव द्वारा गंगा का धारण तथा सगर-पुत्रों का उद्धार भारतीय जीवन-दृष्टि में लोकमंगल, उत्तरदायित्व और आध्यात्मिक साधना के आदर्शों को अभिव्यक्त करते हैं। प्रस्तुत अध्ययन पाठ-विश्लेषणात्मक (Textual Analysis) एवं व्याख्यात्मक (Hermeneutic) पद्धति पर आधारित है तथा इसके माध्यम से यह प्रतिपादित किया गया है कि *वाल्मीकीय रामायण* में गंगा भारतीय सांस्कृतिक चेतना, नैतिक मूल्यों और पर्यावरणीय संवेदनशीलता की एक महत्त्वपूर्ण प्रतीक है। वर्तमान समय में नदी-संरक्षण, सांस्कृतिक विरासत और पर्यावरणीय नैतिकता के संदर्भ में भी यह विमर्श अत्यन्त प्रासंगिक सिद्ध होता है।

प्रमुख शब्द: गंगा, वाल्मीकीय रामायण, धर्म, दर्शन, संस्कृति, त्रिपथगा, भागीरथ, भारतीय सांस्कृतिक चेतना, पर्यावरणीय नैतिकता

भूमिका

भारतीय सभ्यता के विकासक्रम में नदियों का स्थान केवल भौगोलिक या आर्थिक संसाधन के रूप में नहीं रहा है, अपितु वे भारतीय सांस्कृतिक चेतना, धार्मिक आस्था तथा दार्शनिक चिंतन की आधारभूमि भी रही हैं। (Eck, 2012; Kane, 1930–1962) इन नदियों में गंगा का स्थान सर्वोपरि है। भारतीय वाङ्मय में गंगा को 'लोकपावनी', 'त्रिपथगा', 'भागीरथी' तथा 'जाह्नवी' जैसे विविध नामों से अभिहित किया गया है, जो उसके बहुआयामी स्वरूप को उद्घाटित करते हैं। वैदिक साहित्य से लेकर पुराणों, महाकाव्यों तथा उत्तरवर्ती भक्तिकालीन साहित्य तक गंगा केवल एक नदी नहीं, बल्कि जीवन, शुद्धि, मोक्ष, करुणा, लोकमंगल तथा सांस्कृतिक एकात्मता की प्रतीक के रूप में प्रतिष्ठित है। भारतीय जनजीवन में जन्म से मृत्यु तक सम्पन्न होने वाले अनेक धार्मिक एवं सामाजिक संस्कारों में गंगाजल की उपस्थिति उसके सांस्कृतिक महत्त्व को और अधिक सुदृढ़ करती है।

वाल्मीकीय रामायण भारतीय साहित्य की प्राचीनतम महाकाव्यात्मक कृतियों में अग्रगण्य है। यह केवल श्रीराम के जीवन का आख्यान नहीं, बल्कि भारतीय समाज, संस्कृति, धर्म, राजनीति, नैतिकता तथा दार्शनिक आदर्शों का व्यापक दर्पण भी है। *बालकाण्ड* में वर्णित गंगा का आख्यान—विश्वामित्र द्वारा राम को गंगा की उत्पत्ति का वर्णन, गंगावतरण, भगीरथ की तपस्या, शिव द्वारा गंगा का धारण, जह्नु ऋषि का प्रसंग तथा सगर-पुत्रों का उद्धार—भारतीय चिंतन के अनेक गहन आयामों को उद्घाटित करता है। इन प्रसंगों में गंगा केवल एक भौतिक जलधारा नहीं, बल्कि दैवीय अनुग्रह, तप की शक्ति, धर्मपालन, लोककल्याण तथा आध्यात्मिक उन्नयन का सशक्त प्रतीक बनकर उपस्थित होती है।

---

* प्रधानाचार्य, राजकीय बालिका इण्टर कालेज, शीतलमऊ, प्रतापगढ़।

यद्यपि *वाल्मीकीय रामायण* में गंगा सम्बन्धी आख्यानों पर अनेक लेख एवं विवेचन उपलब्ध हैं, तथापि अधिकांश अध्ययन कथानक के वर्णन, धार्मिक महत्ता अथवा पौराणिक प्रसंगों तक ही सीमित दिखाई देते हैं। उनमें गंगा के दार्शनिक आशयों, सांस्कृतिक प्रतीकात्मकता, नैतिक विमर्श तथा भारतीय सभ्यता के निर्माण में उसकी भूमिका का समन्वित विश्लेषण अपेक्षाकृत कम मिलता है। विशेषतः गंगा के 'त्रिपथगा' स्वरूप, भगीरथ के तप के सामाजिक-दार्शनिक निहितार्थ, शिव द्वारा गंगा को धारण करने के सांस्कृतिक प्रतीक तथा गंगा के माध्यम से व्यक्त लोककल्याण की अवधारणा का समग्र अध्ययन अभी भी अपेक्षित है। यही इस शोध का प्रमुख प्रेरक बिंदु है।

प्रस्तुत शोध-पत्र का मूल प्रतिपाद्य यह है कि *वाल्मीकीय रामायण* में गंगा का स्वरूप बहुस्तरीय एवं बहुआयामी है। वह केवल धार्मिक श्रद्धा का विषय नहीं, बल्कि भारतीय दर्शन में धर्म, कर्म, तप, मोक्ष एवं लोकसंग्रह की अवधारणाओं को मूर्त रूप प्रदान करने वाली जीवनदायिनी शक्ति है। गंगा का अवतरण केवल दैवी घटना नहीं, बल्कि दैवी शक्ति और मानवीय पुरुषार्थ के समन्वय का दार्शनिक रूपक है। भगीरथ की दीर्घ तपस्या यह प्रतिपादित करती है कि लोककल्याण हेतु व्यक्तिगत साधना और त्याग आवश्यक है; वहीं शिव द्वारा गंगा को अपनी जटाओं में धारण करना अनियंत्रित शक्ति के संतुलन, मर्यादा और संरक्षण का प्रतीक है। इस प्रकार गंगा का सम्पूर्ण आख्यान भारतीय चिंतन में प्रकृति, धर्म और समाज के मध्य संतुलित संबंध की स्थापना करता है।

वर्तमान वैश्विक परिप्रेक्ष्य में, जब नदियाँ प्रदूषण, अतिक्रमण और पर्यावरणीय संकटों से जूझ रही हैं, *वाल्मीकीय रामायण* में निहित गंगा-दृष्टि नई प्रासंगिकता प्राप्त करती है। यह महाकाव्य नदी को केवल प्राकृतिक संसाधन के रूप में नहीं, बल्कि सांस्कृतिक विरासत, नैतिक उत्तरदायित्व और सामूहिक जीवन के आधार के रूप में देखने की प्रेरणा देता है। अतः गंगा का यह अध्ययन केवल ऐतिहासिक या धार्मिक महत्त्व का नहीं, बल्कि समकालीन पर्यावरणीय नैतिकता, सांस्कृतिक संरक्षण तथा सतत् विकास की अवधारणाओं से भी प्रत्यक्ष रूप से सम्बद्ध है।

वाल्मीकीय रामायण में गंगा के स्वरूप पर अनेक विद्वानों ने धार्मिक, पौराणिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से विचार किया है। अधिकांश अध्ययनों में गंगावतरण, भगीरथ की तपस्या तथा सगर-पुत्रों के उद्धार की कथा का वर्णन प्रमुख रूप से मिलता है। किन्तु इन अध्ययनों में गंगा के दार्शनिक आशयों, सांस्कृतिक प्रतीकात्मकता, नैतिक विमर्श तथा भारतीय जीवन-दृष्टि के साथ उसके अन्तर्सम्बन्धों का समन्वित विश्लेषण अपेक्षाकृत अल्प है। विशेषतः *वाल्मीकीय रामायण* में गंगा को धर्म, लोककल्याण, सांस्कृतिक एकता तथा पर्यावरणीय चेतना के समेकित प्रतीक के रूप में समझने का प्रयास अभी भी सीमित है। प्रस्तुत शोध इसी शोध-अंतर की पूर्ति का प्रयास करता है।

प्रस्तुत शोध पाठ-विश्लेषणात्मक (Textual Analysis) तथा व्याख्यात्मक (Hermeneutic) पद्धति पर आधारित है। अध्ययन का प्रमुख आधार *वाल्मीकीय रामायण* है, जबकि आवश्यकतानुसार अन्य संस्कृत ग्रंथों तथा आधुनिक विद्वानों के शोधों का भी उपयोग किया गया है। इस अध्ययन में गंगा सम्बन्धी प्रसंगों का केवल वर्णन न करके उनके दार्शनिक, सांस्कृतिक तथा प्रतीकात्मक अर्थों का विश्लेषण किया गया है, जिससे *वाल्मीकीय रामायण* में निहित गंगा की बहुआयामी अवधारणा को समग्र रूप से समझा जा सके। अतः यह शोध-पत्र इस निष्कर्ष की स्थापना का प्रयास करता है कि *वाल्मीकीय रामायण* में गंगा भारतीय सांस्कृतिक चेतना की जीवनरेखा, धार्मिक आस्था की आधारशिला, दार्शनिक चिंतन की प्रतीक तथा लोकमंगल की सार्वभौम प्रेरणा के रूप में प्रतिष्ठित है। गंगा का स्वरूप भारतीय परम्परा में प्रकृति और संस्कृति, दैवीयता और मानवीयता, तथा आध्यात्मिकता और सामाजिक उत्तरदायित्व के अद्वितीय समन्वय

का प्रतिनिधित्व करता है। यही समन्वय *वाल्मीकीय रामायण* की सांस्कृतिक दृष्टि को कालजयी बनाता है।

प्रस्तुत शोध के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं—

- *वाल्मीकीय रामायण* में गंगा के स्वरूप का विश्लेषण करना।
- गंगा के धार्मिक एवं दार्शनिक आयामों का अध्ययन करना।
- गंगा के सांस्कृतिक महत्व का मूल्यांकन करना।
- गंगावतरण कथा के प्रतीकात्मक अर्थों का विश्लेषण करना।
- समकालीन पर्यावरणीय एवं सांस्कृतिक संदर्भों में गंगा की प्रासंगिकता को स्पष्ट करना।

साहित्य समीक्षा

भारतीय वाङ्मय में गंगा की महत्ता पर प्राचीन काल से ही व्यापक रूप से विचार किया जाता रहा है। वैदिक साहित्य, महाकाव्यों, पुराणों तथा उत्तरवर्ती संस्कृत एवं भारतीय भाषाओं के साहित्य में गंगा को केवल एक नदी न मानकर धर्म, पवित्रता, मोक्ष तथा लोककल्याण की अधिष्ठात्री शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। *ऋग्वेद* में नदियों की स्तुति के माध्यम से गंगा के पवित्र स्वरूप का संकेत प्राप्त होता है, जबकि *महाभारत, वाल्मीकीय रामायण* तथा *पुराणों* में गंगा के धार्मिक एवं सांस्कृतिक स्वरूप का अधिक विस्तृत निरूपण मिलता है। विशेषतः *वाल्मीकीय रामायण* के *बालकाण्ड* में गंगावतरण, भगीरथ की तपस्या, शिव द्वारा गंगा का धारण तथा सगर-पुत्रों के उद्धार का प्रसंग भारतीय सांस्कृतिक चेतना के महत्त्वपूर्ण आधारों में से एक है।

भारतीय परम्परा के टीकाकारों ने गंगा को मुख्यतः धर्म, तीर्थ तथा मोक्ष की दृष्टि से देखा है। *गोविन्दराज* तथा *महेश्वरतीर्थ* जैसे रामायण-भाष्यकारों ने गंगा के पवित्र स्वरूप, उसके तीर्थ-महात्म्य तथा भगीरथ के तप की धार्मिक महत्ता पर विशेष बल दिया है। इन व्याख्याओं में गंगा दैवी कृपा तथा पाप-क्षालन की शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित होती है, किन्तु उसके सांस्कृतिक तथा दार्शनिक संकेतों का अपेक्षाकृत सीमित विवेचन मिलता है।

आधुनिक काल में *वाल्मीकीय रामायण* तथा भारतीय महाकाव्य पर अनेक विद्वानों ने महत्त्वपूर्ण अध्ययन प्रस्तुत किए हैं। **Robert P. Goldman** ने *The Ramayana of Valmiki* में रामायण के सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक संदर्भों का गम्भीर विश्लेषण करते हुए यह प्रतिपादित किया है कि महाकाव्य केवल धार्मिक आख्यान नहीं, बल्कि भारतीय समाज एवं सांस्कृतिक मूल्यों का दर्पण है। इसी प्रकार **Sheldon Pollock** ने *Ramayana* की राजनीतिक एवं सांस्कृतिक संरचना का विश्लेषण करते हुए यह स्पष्ट किया कि यह ग्रन्थ भारतीय सभ्यता की सांस्कृतिक स्मृति (Cultural Memory) का महत्त्वपूर्ण स्रोत है। यद्यपि इन अध्ययनों में गंगा का उल्लेख प्राप्त होता है, तथापि गंगा के दार्शनिक स्वरूप का स्वतंत्र विश्लेषण उनका प्रमुख उद्देश्य नहीं है।

भारतीय पवित्र भूगोल (Sacred Geography) के क्षेत्र में **Diana L. Eck** का योगदान अत्यन्त उल्लेखनीय है। अपनी प्रसिद्ध कृति *India: A Sacred Geography* में उन्होंने गंगा को भारतीय सांस्कृतिक एकता का आधार बताते हुए यह प्रतिपादित किया है कि भारत की सांस्कृतिक संरचना का निर्माण तीर्थ-परम्पराओं और पवित्र नदियों के माध्यम से हुआ। उनके अनुसार गंगा केवल जलधारा नहीं, बल्कि भारतीय आध्यात्मिक अनुभव और सांस्कृतिक पहचान की जीवनरेखा है। यह दृष्टिकोण वर्तमान अध्ययन के सांस्कृतिक आयाम को समझने में विशेष रूप से सहायक है।

भारतीय दर्शन और धर्म के क्षेत्र में P. V. Kane, Vasudha Narayanan, A. K. Coomaraswamy तथा R. C. Hazra जैसे विद्वानों ने धर्म, तीर्थ, पवित्रता और सांस्कृतिक परम्पराओं पर महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। इन अध्ययनों में गंगा की धार्मिक प्रतिष्ठा, तीर्थ-संस्कृति तथा भारतीय जीवन-पद्धति में उसकी भूमिका पर प्रकाश डाला गया है, किन्तु *वाल्मीकीय रामायण* में गंगा के दार्शनिक एवं सांस्कृतिक विमर्श का समग्र विश्लेषण अपेक्षाकृत अल्प है।

हिन्दी में भी गंगा पर अनेक लेख एवं शोध उपलब्ध हैं, जिनमें प्रायः गंगा की पौराणिक महत्ता, धार्मिक आस्था अथवा गंगावतरण की कथा का वर्णन किया गया है। अधिकांश अध्ययनों का केन्द्र गंगा की महिमा, तीर्थ-महत्त्व तथा धार्मिक विश्वास रहा है। कुछ शोधों में पर्यावरणीय दृष्टि से भी गंगा की चर्चा हुई है, किन्तु *वाल्मीकीय रामायण* के सन्दर्भ में गंगा को धर्म, दर्शन, सांस्कृतिक चेतना, नैतिकता तथा लोककल्याण के समन्वित प्रतीक के रूप में देखने का प्रयास अपेक्षाकृत विरल है।

उपर्युक्त साहित्य के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि अब तक के अधिकांश अध्ययन गंगा के धार्मिक या पौराणिक पक्ष पर केन्द्रित रहे हैं। *वाल्मीकीय रामायण* में निहित गंगा की बहुस्तरीय अवधारणा—जिसमें दार्शनिक, सांस्कृतिक, नैतिक, सामाजिक एवं प्रतीकात्मक सभी आयाम अन्तर्निहित हैं—का समेकित विश्लेषण अपेक्षाकृत कम हुआ है। विशेषतः त्रिपथगा की दार्शनिक व्याख्या, भगीरथ की तपस्या का लोकमंगलपरक स्वरूप, शिव द्वारा गंगा के धारण की सांस्कृतिक प्रतीकात्मकता तथा गंगा के माध्यम से प्रकृति और संस्कृति के अन्तर्सम्बन्धों का व्यवस्थित अध्ययन अभी भी शोध की अपेक्षा रखता है।

प्रस्तुत शोध इसी रिक्ति (Research Gap) की पूर्ति का प्रयास करता है। इसमें *वाल्मीकीय रामायण* में वर्णित गंगा के प्रसंगों का केवल वर्णन न करके उनके दार्शनिक, सांस्कृतिक तथा नैतिक आशयों का विश्लेषण किया गया है। साथ ही यह अध्ययन यह भी प्रतिपादित करता है कि गंगा भारतीय सांस्कृतिक चेतना में प्रकृति, धर्म, लोकमंगल तथा आध्यात्मिकता के समन्वित आदर्श का प्रतिनिधित्व करती है। इस प्रकार यह शोध गंगा-विमर्श को केवल पौराणिक आख्यान के स्तर से आगे बढ़ाकर भारतीय दार्शनिक एवं सांस्कृतिक परम्परा के व्यापक संदर्भ में स्थापित करने का प्रयास करता है।

वाल्मीकीय रामायण में गंगा की संकल्पना

वाल्मीकीय रामायण में गंगा का स्वरूप केवल एक प्राकृतिक नदी अथवा भौगोलिक जलधारा तक सीमित नहीं है, अपितु वह भारतीय दार्शनिक चिन्तन, धार्मिक आस्था तथा सांस्कृतिक चेतना का बहुआयामी प्रतीक है। महर्षि वाल्मीकि ने गंगा को जहाँ एक ओर लोकपावनी, त्रिपथगा तथा दिव्य नदी के रूप में चित्रित किया है, वहीं दूसरी ओर उसे देव, मानव तथा समस्त सृष्टि के मध्य सेतु के रूप में भी प्रतिष्ठित किया है। इस प्रकार गंगा का स्वरूप भौतिक और आध्यात्मिक, दोनों स्तरों पर भारतीय जीवन-दृष्टि का प्रतिनिधित्व करता है। राम और लक्ष्मण जब महर्षि विश्वामित्र के साथ सरयू और गंगा के संगम पर पहुँचते हैं, तब वाल्मीकि गंगा का परिचय इन शब्दों में देते हैं—

तौ प्रयान्तौ महावीर्यौ दिव्यां त्रिपथगां नदीम्।
ददृशाते ततस्तत्र सरय्वाः सङ्गमे शुभे॥ (बालकाण्ड 23.5)

यहाँ 'दिव्या' तथा 'त्रिपथगा' जैसे विशेषण केवल गंगा की भौगोलिक विशेषता का वर्णन नहीं करते, बल्कि उसके दार्शनिक स्वरूप की ओर संकेत करते हैं। 'दिव्या' शब्द गंगा के दैवी उद्गम तथा उसकी आध्यात्मिक सत्ता का द्योतक है, जबकि 'त्रिपथगा' उसके त्रिलोकव्यापी अस्तित्व को अभिव्यक्त करता है। भारतीय दर्शन में त्रिलोक का तात्पर्य केवल तीन भौतिक लोकों से नहीं, बल्कि अस्तित्व के विविध स्तरों से

भी है। इस दृष्टि से गंगा ब्रह्माण्डीय एकता (Cosmic Unity) तथा सम्पूर्ण सृष्टि के अन्तर्सम्बन्ध की प्रतीक बन जाती है।

गंगा का प्रथम दर्शन सरयू के संगम पर कराया जाना भी अत्यन्त अर्थपूर्ण है। भारतीय संस्कृति में संगम केवल दो नदियों का मिलन नहीं, बल्कि विविध शक्तियों, परम्पराओं तथा जीवन-मूल्यों के समन्वय का प्रतीक माना गया है। अतः राम के जीवन की महत्त्वपूर्ण यात्रा का प्रारम्भ गंगा-संगम से होना इस तथ्य का द्योतक है कि धर्म की स्थापना समन्वय, पवित्रता तथा सांस्कृतिक एकात्मता के आधार पर ही सम्भव है। वाल्मीकि यह भी उल्लेख करते हैं कि गंगा के तट पर महर्षियों के आश्रम स्थित थे, जहाँ वे दीर्घकाल तक तपस्या करते थे—

तत्राश्रमपदं पुण्यमृषीणां भावितात्मनाम्।

बहुवर्षसहस्राणि तप्यतां परमं तपः॥ (बालकाण्ड 23.6)

यह प्रसंग केवल आश्रमों के भौगोलिक स्थान का उल्लेख नहीं करता, बल्कि यह स्पष्ट करता है कि भारतीय परम्परा में प्रकृति और अध्यात्म का सम्बन्ध परस्पर पूरक माना गया है। गंगा का तट तप, ज्ञान, आत्मसंयम तथा आध्यात्मिक साधना का केन्द्र बन जाता है। इस प्रकार गंगा बाह्य शुद्धि के साथ-साथ अन्तःकरण की निर्मलता का भी प्रतीक है। वाल्मीकि द्वारा गंगा के तट को तपोभूमि के रूप में प्रस्तुत करना भारतीय संस्कृति की उस मूल अवधारणा को व्यक्त करता है जिसमें प्रकृति को आध्यात्मिक साधना का सहचर माना गया है। नदी, पर्वत, वन तथा आश्रम—ये सभी मिलकर एक ऐसी सांस्कृतिक संरचना निर्मित करते हैं जिसमें मनुष्य स्वयं को प्रकृति का स्वामी नहीं, बल्कि उसका सहभागी अनुभव करता है। आधुनिक पर्यावरणीय दर्शन में जिस *Ecological Harmony* अथवा प्रकृति-मानव सहअस्तित्व की चर्चा की जाती है, उसका प्रारम्भिक स्वरूप *वाल्मीकीय रामायण* में स्पष्टतः दृष्टिगोचर होता है।

गंगा की संकल्पना का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष उसकी पवित्रता है। *रामायण* में वर्णित है कि देवता भी अपने पापों एवं मलिनता के निवारण के लिए गंगाजल का आश्रय ग्रहण करते हैं। इन्द्र के वृत्र-वध के उपरान्त गंगाजल से उनका अभिषेक केवल एक धार्मिक अनुष्ठान नहीं है, बल्कि यह इस तथ्य का प्रतीक है कि सत्ता, सामर्थ्य अथवा दैवी पद भी नैतिक उत्तरदायित्व से परे नहीं हैं। शुद्धि की आवश्यकता देवताओं को भी है। इस प्रकार गंगा न्याय, प्रायश्चित्त तथा नैतिक पुनर्स्थापन (Moral Restoration) की प्रतीक बनकर उभरती है। इसी प्रकार वाल्मीकि गंगा को 'सरितां श्रेष्ठा' कहकर सम्बोधित करते हैं—

जाह्नवीं सरितां श्रेष्ठां ददृशुर्मुनिसेविताम्।

तां दृष्ट्वा पुण्यसलिलां हंससारससेविताम्॥ (बालकाण्ड 24.7–8)

यहाँ 'सरितां श्रेष्ठा' का आशय केवल जल-समृद्धि नहीं है। भारतीय काव्यशास्त्र में 'श्रेष्ठता' का सम्बन्ध गुण, प्रभाव तथा लोकहित से होता है। गंगा की श्रेष्ठता उसके प्रवाह में नहीं, बल्कि उसके द्वारा सम्पन्न लोकमंगल, सांस्कृतिक एकीकरण तथा आध्यात्मिक प्रेरणा में निहित है। हंस और सारस जैसे पक्षियों का उल्लेख भी प्रतीकात्मक है। भारतीय साहित्य में हंस विवेक, ज्ञान तथा शुद्धता का प्रतीक माना जाता है। अतः गंगा ज्ञान और विवेक की धारा के रूप में भी व्याख्यायित की जा सकती है।

वाल्मीकि गंगा को 'लोकपावनी', 'पुण्यसलिला' तथा 'सरितां श्रेष्ठा' जैसे विशेषणों से अलंकृत करते हैं। ये विशेषण केवल धार्मिक श्रद्धा की अभिव्यक्ति नहीं हैं, बल्कि भारतीय समाज में गंगा के सांस्कृतिक महत्व को भी रेखांकित करते हैं। 'लोकपावनी' का आशय केवल पाप-क्षालन नहीं, बल्कि समाज के नैतिक एवं सांस्कृतिक परिष्कार से भी है। गंगा का पवित्र जल व्यक्ति को आत्मानुशासन, संयम तथा धर्मपालन की प्रेरणा देता है। इस प्रकार गंगा भारतीय संस्कृति में शारीरिक शुद्धि से

अधिक मानसिक एवं आचरणगत शुद्धि की प्रतीक है। इस प्रकार *वाल्मीकीय रामायण* में गंगा की संकल्पना बहुस्तरीय है। वह एक साथ प्रकृति, धर्म, दर्शन, संस्कृति, लोकजीवन और आध्यात्मिक साधना का समन्वित रूप प्रस्तुत करती है। इस प्रकार *वाल्मीकीय रामायण* में गंगा की संकल्पना बहुस्तरीय एवं बहुआयामी है। वह प्रकृति और संस्कृति, धर्म और दर्शन, व्यक्ति और समाज तथा देव और मानव के मध्य सेतु का कार्य करती है। गंगा का यह स्वरूप भारतीय सभ्यता की उस समन्वयवादी दृष्टि का प्रतिनिधित्व करता है जिसमें प्रकृति केवल उपभोग की वस्तु नहीं, बल्कि श्रद्धा, संरक्षण और लोकमंगल की आधारशिला मानी जाती है। महर्षि वाल्मीकि ने गंगा को जिस व्यापक दृष्टि से प्रस्तुत किया है, वह उसे एक सामान्य नदी से ऊपर उठाकर भारतीय सांस्कृतिक चेतना की शाश्वत प्रतीक के रूप में प्रतिष्ठित करता है।

गंगा का दार्शनिक विमर्श

वाल्मीकीय रामायण में गंगा का स्वरूप केवल धार्मिक आस्था अथवा पौराणिक आख्यान तक सीमित नहीं है, बल्कि वह भारतीय दार्शनिक चिन्तन की अनेक मूलभूत अवधारणाओं का सशक्त प्रतीक भी है। महर्षि वाल्मीकि ने गंगा के माध्यम से सृष्टि, धर्म, पुरुषार्थ, लोकमंगल, तप, मोक्ष तथा प्रकृति-मानव सम्बन्ध जैसे गहन दार्शनिक प्रश्नों का अप्रत्यक्ष निरूपण किया है। गंगावतरण का सम्पूर्ण प्रसंग भारतीय दर्शन में दैवी अनुग्रह (Divine Grace) और मानवीय पुरुषार्थ (Human Endeavour) के समन्वय का अद्वितीय उदाहरण है।

(क) त्रिपथगाः ब्रह्माण्डीय एकता का दार्शनिक प्रतीक

महर्षि वाल्मीकि गंगा को 'त्रिपथगा' कहते हैं। सामान्यतः इसका अर्थ स्वर्ग, पृथ्वी और पाताल— तीनों लोकों में प्रवाहित होने वाली नदी माना जाता है, किन्तु दार्शनिक दृष्टि से इसका आशय इससे कहीं अधिक व्यापक है। भारतीय दर्शन में सम्पूर्ण अस्तित्व को एक अखण्ड सत्ता के रूप में देखा गया है। उपनिषदों का "सर्वं खल्विदं ब्रह्म" का सिद्धान्त तथा *भगवद्गीता* का "यो मां पश्यति सर्वत्र" का भाव इसी समग्र दृष्टि का प्रतिपादन करता है। गंगा का त्रिपथगा स्वरूप इस अखण्डता का प्रतीक है। वह तीन लोकों को केवल भौतिक रूप से नहीं जोड़ती, बल्कि दैवी चेतना, मानवीय जीवन और प्रकृति के मध्य एक सतत सम्बन्ध स्थापित करती है। इस प्रकार गंगा विभाजन नहीं, बल्कि समन्वय की दार्शनिक अवधारणा का मूर्त रूप है।

इसी कारण गंगा भारतीय संस्कृति में केवल नदी नहीं, बल्कि जीवन के विविध स्तरों को जोड़ने वाली आध्यात्मिक धारा के रूप में प्रतिष्ठित हुई। यहाँ वाल्मीकि की दृष्टि स्पष्टतः अद्वैतपरक प्रतीत होती है, जहाँ समस्त जगत एक व्यापक दैवी व्यवस्था का अंग है।

(ख) भागीरथ की तपस्याः पुरुषार्थ और लोकसंग्रह का दर्शन

गंगावतरण की कथा का केन्द्रीय पात्र भगीरथ है। सामान्यतः उनकी तपस्या को पूर्वजों के उद्धार का माध्यम माना जाता है, किन्तु दार्शनिक दृष्टि से यह पुरुषार्थ की सर्वोच्च अभिव्यक्ति है।

भगीरथ अपने व्यक्तिगत सुख के लिए तप नहीं करते। उनका उद्देश्य सम्पूर्ण वंश का उद्धार और व्यापक लोककल्याण है। यही कारण है कि उनकी साधना भारतीय परम्परा में 'भागीरथ प्रयत्न' का पर्याय बन जाती है। यह प्रसंग *भगवद्गीता* के "लोकसंग्रह" सिद्धान्त की स्मृति कराता है—

"लोकसंग्रहमेवापि सम्पश्यन् कर्तुमर्हसि।" (गीता 3.20)

यद्यपि *रामायण* और *गीता* भिन्न ग्रन्थ हैं, तथापि दोनों में लोकहित के लिए कर्म की जो अवधारणा व्यक्त हुई है, वह भारतीय दार्शनिक परम्परा की निरन्तरता को दर्शाती है। भगीरथ का तप यह प्रतिपादित करता है कि महान सामाजिक परिवर्तन केवल दैवी कृपा से नहीं, बल्कि

दीर्घकालीन आत्मानुशासन, धैर्य और पुरुषार्थ से सम्भव होते हैं। इस प्रकार गंगावतरण भारतीय चिन्तन में कर्मयोग की सशक्त अभिव्यक्ति के रूप में भी देखा जा सकता है।

(ग) शिव की जटाएँ : अनियंत्रित शक्ति के संयमन का दर्शन

गंगावतरण के प्रसंग में ब्रह्मा स्पष्ट करते हैं कि पृथ्वी गंगा के प्रचण्ड वेग को धारण करने में समर्थ नहीं है; अतः शिव ही उसे धारण कर सकते हैं। यह प्रसंग केवल एक पौराणिक घटना नहीं है। इसके पीछे गहन दार्शनिक संकेत निहित हैं। गंगा यहाँ प्रकृति की असीम शक्ति का प्रतिनिधित्व करती है, जबकि शिव विवेक, संयम और संतुलन के प्रतीक हैं। यदि शक्ति अनियंत्रित हो तो वह विनाश का कारण बन सकती है; किन्तु जब वही शक्ति विवेक के अधीन होती है, तब वह लोकमंगल का साधन बन जाती है। अतः शिव की जटाएँ केवल अलंकार नहीं, बल्कि मर्यादित शक्ति (Regulated Power) की दार्शनिक अवधारणा का प्रतीक हैं। आधुनिक पर्यावरणीय दर्शन में भी यह विचार अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है कि प्रकृति का दोहन नहीं, बल्कि संतुलित उपयोग ही मानवता के हित में है। इस दृष्टि से शिव द्वारा गंगा का धारण भारतीय पर्यावरणीय नैतिकता का प्राचीन प्रतीक माना जा सकता है।

(घ) गंगा : शुद्धि और मोक्ष की दार्शनिक अवधारणा

रामायण में गंगा को 'लोकपावनी', 'पुण्यसलिला' तथा 'सर्वपापप्रणाशिनी' कहा गया है। सामान्यतः इन विशेषणों को धार्मिक विश्वास के रूप में देखा जाता है, किन्तु दार्शनिक दृष्टि से इनका आशय नैतिक और आध्यात्मिक शुद्धि से है। भारतीय दर्शन में पाप केवल बाह्य कर्म नहीं, बल्कि अविद्या, अहंकार और अधर्म से उत्पन्न मानसिक मलिनता का भी प्रतीक है। जब इन्द्र वृत्र-वध के उपरान्त गंगाजल से शुद्ध होते हैं, तब यह केवल धार्मिक अनुष्ठान नहीं, बल्कि यह स्वीकारोक्ति है कि शक्ति और अधिकार के साथ नैतिक उत्तरदायित्व भी जुड़ा है। इसी प्रकार सगर-पुत्रों का उद्धार यह प्रतिपादित करता है कि मुक्ति केवल मृत्यु के पश्चात प्राप्त होने वाली अवस्था नहीं, बल्कि धर्मानुकूल कर्म और आत्मशुद्धि की प्रक्रिया है। गंगा इस आत्मशुद्धि की प्रतीक बनकर उभरती है।

गंगा का सांस्कृतिक स्वरूप

वाल्मीकीय रामायण में गंगा का स्वरूप बहुआयामी है। वह केवल एक पवित्र नदी नहीं, बल्कि धर्म, संस्कृति, लोकमंगल, मातृत्व तथा दैवी शक्ति की सजीव अभिव्यक्ति है। गंगा के सम्बन्ध में प्रस्तुत प्रत्येक प्रसंग भारतीय जीवन-दर्शन के किसी न किसी मौलिक तत्व को उद्घाटित करता है। अतः इन प्रसंगों का मूल्यांकन केवल पौराणिक कथा के रूप में न करके उनके सांस्कृतिक एवं दार्शनिक निहितार्थों के आलोक में किया जाना अपेक्षित है।

गंगा का दैवी उद्गम : प्रकृति का आध्यात्मिक रूपान्तरण

महर्षि विश्वामित्र गंगा की उत्पत्ति का वर्णन करते हुए बताते हैं कि हिमवान और मेना की दो पुत्रियाँ—उमा और गंगा—थीं। देवताओं ने त्रिलोकी के कल्याण के लिए गंगा को हिमवान से प्राप्त किया—

दददौ धर्मेण हिमवांस्तनयां लोकपावनीम्।
स्वच्छन्दपथगां गंगां त्रैलोक्यहितकाम्यया॥ (बालकाण्ड 35.17–18)

यहाँ 'लोकपावनी' और 'त्रैलोक्यहितकाम्या' विशेष ध्यान देने योग्य पद हैं। वाल्मीकि गंगा को केवल हिमालय की पुत्री नहीं कहते, बल्कि सम्पूर्ण त्रिलोकी के कल्याण के लिए अवतरित शक्ति के रूप में प्रस्तुत करते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि भारतीय संस्कृति में प्रकृति का अस्तित्व केवल भौतिक उपयोगिता तक सीमित नहीं है; वह लोकमंगल की आध्यात्मिक सत्ता भी है। गंगा का उद्गम पर्वत से

है, किन्तु उसका उद्देश्य सम्पूर्ण सृष्टि का हित है। इस प्रकार गंगा प्रकृति के सार्वभौमिक एवं लोकहितकारी स्वरूप का प्रतिनिधित्व करती है।

यह प्रसंग भारतीय सांस्कृतिक दृष्टि के उस मूल सिद्धान्त को भी व्यक्त करता है जिसमें प्रकृति को 'माता' का स्थान दिया गया है। गंगा का मातृत्व केवल जैविक अर्थों में नहीं, बल्कि संरक्षण, पोषण और जीवनदायिनी शक्ति के रूप में अभिव्यक्त होता है।

कार्तिकेय जन्मकथा में गंगा की मातृशक्ति

वाल्मीकीय रामायण में गंगा की भूमिका केवल पवित्र नदी तक सीमित नहीं है। कार्तिकेय की उत्पत्ति के प्रसंग में वाल्मीकि उन्हें दैवी मातृत्व की धारिणी के रूप में प्रस्तुत करते हैं। देवताओं के अनुरोध पर अग्निदेव शिव के तेज को धारण करने के लिए गंगा से निवेदन करते हैं—

देवतानां प्रतिज्ञाय गंगामभ्येत्य पावकः।

गर्भं धारय वै देवि देवतानामिदं प्रियम्॥ (बालकाण्ड 37.12)

गंगा उस तेज को धारण करती हैं, यद्यपि उसकी तीव्रता उनके लिए असहनीय हो जाती है। अन्ततः उसी तेज से कार्तिकेय का प्रादुर्भाव होता है। यह प्रसंग गंगा के मातृत्व को केवल जैविक घटना के रूप में नहीं, बल्कि सृजनात्मक शक्ति के रूप में स्थापित करता है। यहाँ गंगा जीवन के संरक्षण और दैवी व्यवस्था की निरन्तरता का माध्यम बनती हैं। इस कथा का सांस्कृतिक आशय यह है कि सृजन सदैव त्याग और धारण-शक्ति पर आधारित होता है। गंगा स्वयं कष्ट सहकर भी दैवी उद्देश्य की पूर्ति करती हैं। इस प्रकार वाल्मीकि गंगा को सहिष्णुता, त्याग और सृजनशीलता की आदर्श प्रतिमा के रूप में प्रतिष्ठित करते हैं। भारतीय संस्कृति में नारी और मातृत्व के प्रति जो उच्च आदरभाव दिखाई देता है, उसका एक महत्वपूर्ण आधार इस प्रकार के आख्यान भी हैं।

गंगा : पवित्रता से लोकमंगल तक

वाल्मीकीय रामायण में गंगा का उल्लेख बार-बार पाप-क्षालन करने वाली नदी के रूप में मिलता है। किन्तु यह पवित्रता केवल धार्मिक अनुष्ठानों तक सीमित नहीं है। गंगा का सम्पर्क व्यक्ति को धर्ममार्ग की ओर उन्मुख करता है। श्रीराम, विश्वामित्र तथा अन्य ऋषियों द्वारा गंगा-स्नान और तर्पण का उल्लेख यह संकेत करता है कि गंगा धार्मिक अनुशासन तथा सांस्कृतिक मर्यादा की आधारभूमि है।

वाल्मीकि के वर्णन में गंगा के तट केवल स्नान-स्थल नहीं हैं, बल्कि तप, यज्ञ, अध्ययन और आध्यात्मिक साधना के केन्द्र भी हैं। इससे स्पष्ट होता है कि गंगा ने भारतीय आश्रम-व्यवस्था तथा ज्ञान-परम्परा के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। भारतीय सभ्यता के अनेक प्राचीन नगर, आश्रम और तीर्थ गंगा के तट पर विकसित हुए। इस प्रकार गंगा ने केवल भौगोलिक नहीं, बल्कि सांस्कृतिक भूगोल (Cultural Geography) का भी निर्माण किया।

गंगा और भारतीय सांस्कृतिक चेतना

महर्षि वाल्मीकि की दृष्टि में गंगा सम्पूर्ण भारतीय समाज को जोड़ने वाली सांस्कृतिक शक्ति है। गंगा का प्रवाह हिमालय से समुद्र तक विस्तृत है; इसी प्रकार उसकी सांस्कृतिक उपस्थिति भी सम्पूर्ण भारतीय जीवन में व्याप्त है। गंगा के प्रति श्रद्धा किसी एक वर्ग, जाति अथवा क्षेत्र तक सीमित नहीं है, बल्कि वह सम्पूर्ण समाज की सामूहिक आस्था का केन्द्र है। रामायण में गंगा के प्रत्येक उल्लेख में श्रद्धा, विनम्रता और आदर का भाव विद्यमान है। श्रीराम स्वयं गंगा को प्रणाम करते हैं, ऋषि उनके तट पर तपस्या करते हैं, देवता उनके जल को पवित्र मानते हैं और भगीरथ उनके अवतरण के लिए

तप करते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि गंगा भारतीय संस्कृति में धर्म, समाज और राज्य—तीनों को जोड़ने वाली साझा सांस्कृतिक धरोहर है। इसी कारण गंगा का महत्त्व केवल धार्मिक नहीं, बल्कि सभ्यतागत (Civilizational) भी है। वह भारतीय संस्कृति की निरन्तरता, सामूहिक स्मृति और सांस्कृतिक एकात्मता का प्रतीक बन जाती है। उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि *वाल्मीकीय रामायण* में गंगा का स्वरूप बहुआयामी है। वह दैवी शक्ति है, मातृत्व की प्रतीक है, धर्म की आधारभूमि है, ज्ञान और तप की संरक्षिका है तथा भारतीय सांस्कृतिक चेतना की जीवनधारा है। महर्षि वाल्मीकि ने गंगा को केवल एक पौराणिक पात्र के रूप में नहीं, बल्कि भारतीय जीवन-दृष्टि के ऐसे स्थायी प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया है, जो प्रकृति, संस्कृति और आध्यात्मिकता के समन्वित आदर्श को अभिव्यक्त करता है।

गंगावतरण का प्रतीकात्मक एवं नैतिक विश्लेषण

वाल्मीकीय रामायण में गंगावतरण का प्रसंग केवल एक पौराणिक आख्यान नहीं है, बल्कि भारतीय जीवन-दृष्टि, नैतिक मूल्यों तथा सांस्कृतिक आदर्शों का गहन प्रतीकात्मक निरूपण भी है। महर्षि वाल्मीकि ने इस प्रसंग के माध्यम से यह प्रतिपादित किया है कि समाज का कल्याण दैवी अनुकम्पा और मानवीय पुरुषार्थ दोनों के समन्वय से ही सम्भव है। गंगा का स्वर्ग से पृथ्वी पर अवतरण केवल जलधारा का प्रवाह नहीं, बल्कि दिव्यता के लोकजीवन में अवतरण का दार्शनिक रूपक है।

गंगावतरण की प्रक्रिया में भगीरथ, ब्रह्मा, शिव तथा गंगा—इन चारों की सक्रिय भूमिका है। यह तथ्य अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है कि इनमें से कोई भी अकेला सम्पूर्ण कार्य को सम्पन्न नहीं कर सकता। भगीरथ तप करते हैं, ब्रह्मा वरदान देते हैं, शिव गंगा के वेग को धारण करते हैं और अन्ततः गंगा पृथ्वी पर अवतरित होकर लोकमंगल का कार्य पूर्ण करती हैं। यह समन्वित प्रक्रिया भारतीय संस्कृति के उस सिद्धान्त की पुष्टि करती है जिसमें सहयोग, उत्तरदायित्व तथा सामूहिक प्रयत्न को सफलता का आधार माना गया है।

भगीरथ की तपस्या इस कथा का नैतिक केन्द्र है। उनका उद्देश्य व्यक्तिगत लाभ नहीं, बल्कि अपने पूर्वजों का उद्धार और समस्त वंश का कल्याण है। इस प्रकार वाल्मीकि आदर्श नेतृत्व की अवधारणा प्रस्तुत करते हैं, जहाँ शासक का धर्म निजी सुख नहीं, बल्कि लोककल्याण होता है। यही कारण है कि भारतीय परम्परा में 'भागीरथ प्रयत्न' असम्भव प्रतीत होने वाले लोकहितकारी कार्यों के लिए प्रयुक्त होने लगा। यह अभिव्यक्ति आज भी भारतीय समाज में सक्रिय है, जो *रामायण* की सांस्कृतिक निरन्तरता का प्रमाण है।

शिव द्वारा गंगा को अपनी जटाओं में धारण करने का प्रसंग भी अत्यन्त प्रतीकात्मक है। गंगा का अनियंत्रित वेग विनाशकारी हो सकता था, किन्तु शिव उसे संयमित कर पृथ्वी के लिए कल्याणकारी बना देते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि शक्ति तभी उपयोगी होती है जब उसका संचालन विवेक, धैर्य और मर्यादा के साथ किया जाए। यह सन्देश केवल धार्मिक नहीं, बल्कि सामाजिक और नैतिक भी है। आधुनिक संदर्भ में इसे प्राकृतिक संसाधनों के उत्तरदायी उपयोग तथा संतुलित विकास की अवधारणा से भी जोड़ा जा सकता है।

ऋषि जह्नु का प्रसंग भारतीय संस्कृति की समन्वयवादी प्रवृत्ति का उत्कृष्ट उदाहरण है। गंगा के कारण यज्ञ में व्यवधान उत्पन्न होने पर जह्नु क्रोधित होते हैं, किन्तु देवताओं के अनुरोध पर वे पुनः गंगा को प्रवाहित कर देते हैं। इस घटना से स्पष्ट होता है कि भारतीय संस्कृति में संवाद, क्षमा तथा

पुनर्स्थापन को संघर्ष से अधिक महत्त्व दिया गया है। इसी कारण गंगा 'जाह्नवी' नाम से भी प्रतिष्ठित होती हैं। यह नाम केवल एक घटना का स्मरण नहीं, बल्कि ऋषि-परम्परा और लोकपरम्परा के समन्वय का सांस्कृतिक प्रतीक है।

सगर-पुत्रों के उद्धार का प्रसंग भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। गंगा के स्पर्श से उनका उद्धार यह संकेत करता है कि भारतीय संस्कृति में मुक्ति केवल व्यक्तिगत साधना का विषय नहीं, बल्कि पूर्वजों, परिवार और समाज के प्रति उत्तरदायित्व से भी जुड़ी हुई है। इस प्रसंग में गंगा पीढ़ियों के मध्य एक आध्यात्मिक सेतु का कार्य करती हैं और भारतीय पारिवारिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों को सुदृढ़ करती हैं।

गंगावतरण की कथा का एक अन्य महत्त्वपूर्ण संदेश यह है कि प्रकृति स्वयं में पूजनीय है। गंगा के प्रति श्रद्धा केवल धार्मिक आस्था का परिणाम नहीं, बल्कि प्रकृति के प्रति कृतज्ञता का भी प्रतीक है। *वाल्मीकीय रामायण* में गंगा का प्रत्येक उल्लेख आदर, पवित्रता और विनम्रता के साथ किया गया है। इससे स्पष्ट होता है कि प्राचीन भारतीय समाज में प्रकृति का संरक्षण धार्मिक और सांस्कृतिक दायित्व माना जाता था। आज जब नदियाँ प्रदूषण और अतिक्रमण जैसी समस्याओं से जूझ रही हैं, तब *रामायण* की यह दृष्टि अत्यन्त प्रासंगिक प्रतीत होती है।

अतः गंगावतरण का सम्पूर्ण प्रसंग केवल धार्मिक कथा नहीं, बल्कि भारतीय संस्कृति के नैतिक आदर्शों—लोककल्याण, त्याग, उत्तरदायित्व, संयम, समन्वय तथा प्रकृति-सम्मान—का सशक्त दार्शनिक प्रतिपादन है। यही कारण है कि *वाल्मीकीय रामायण* में गंगा का स्वरूप युगों-युगों तक भारतीय समाज के लिए प्रेरणास्रोत बना हुआ है।

वाल्मीकीय रामायण में गंगावतरण का प्रसंग भारतीय साहित्य की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण सांस्कृतिक कथाओं में से एक है। सामान्यतः इसे सगर-पुत्रों के उद्धार की कथा के रूप में देखा जाता है, किन्तु इसका गहन अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि यह प्रसंग धर्म, पुरुषार्थ, लोकमंगल तथा नैतिक उत्तरदायित्व की भारतीय अवधारणा का दार्शनिक निरूपण भी है। गंगावतरण की सम्पूर्ण प्रक्रिया किसी एक पात्र के प्रयास का परिणाम नहीं है, बल्कि इसमें सगर, अंशुमान, दिलीप, भगीरथ, ब्रह्मा, शिव तथा स्वयं गंगा—सभी की सहभागिता दिखाई देती है। महर्षि वाल्मीकि इस समन्वित प्रयास के माध्यम से यह संकेत करते हैं कि लोककल्याण व्यक्तिगत उपलब्धि का विषय नहीं, बल्कि सामूहिक उत्तरदायित्व का परिणाम है।

कथा का आरम्भ महाराज सगर के अश्वमेध यज्ञ से होता है। यज्ञीय अश्व के लोप होने पर सगर अपने पुत्रों को उसकी खोज का आदेश देते हैं। अश्व की खोज में वे सम्पूर्ण पृथ्वी का विदारण करने लगते हैं, जिससे समस्त प्राणी व्याकुल हो उठते हैं और अन्ततः कपिल मुनि के कोप से उनका विनाश हो जाता है। वाल्मीकि इस घटना के माध्यम से केवल दैवी दण्ड का वर्णन नहीं करते, बल्कि यह प्रतिपादित करते हैं कि शक्ति यदि विवेक और मर्यादा से रहित हो जाए तो उसका परिणाम विनाशकारी होता है। सगर-पुत्रों का उद्देश्य राजाज्ञा का पालन था, किन्तु साधनों की मर्यादा भंग होने के कारण उनका पराक्रम धर्म से विचलित हो जाता है। इस प्रकार *रामायण* यह स्थापित करती है कि राजधर्म का आधार केवल अधिकार नहीं, बल्कि उत्तरदायित्व और संयम भी है।

सगर के पश्चात् अंशुमान और दिलीप द्वारा किए गए प्रयास असफल रहते हैं, किन्तु भगीरथ अपने पूर्वजों के उद्धार के संकल्प को नहीं छोड़ते। वे राज्य का भार मंत्रियों को सौंपकर दीर्घकाल तक कठोर तपस्या करते हैं। उनके तप से प्रसन्न होकर ब्रह्मा गंगा के पृथ्वी पर अवतरण की अनुमति देते हैं। भगीरथ का यह प्रयास व्यक्तिगत हित से प्रेरित नहीं है; उसका लक्ष्य समष्टि का कल्याण है। यही

कारण है कि भारतीय सांस्कृतिक परम्परा में कठिन किन्तु लोकहितकारी प्रयास के लिए 'भागीरथ प्रयत्न' शब्द का प्रयोग प्रचलित हुआ। इस प्रसंग में भगीरथ का चरित्र आदर्श नेतृत्व, धैर्य, त्याग और लोकमंगल के प्रति समर्पण का प्रतीक बनकर उभरता है।

किन्तु केवल भगीरथ की तपस्या पर्याप्त नहीं होती। ब्रह्मा स्वयं संकेत करते हैं कि गंगा का वेग पृथ्वी सहन नहीं कर सकेगी; अतः शिव को उसे धारण करना होगा। शिव द्वारा गंगा को अपनी जटाओं में धारण करना केवल पौराणिक घटना नहीं, बल्कि यह उस सांस्कृतिक चेतना का प्रतीक है जिसमें शक्ति का संचालन मर्यादा और विवेक के अधीन होना चाहिए। अनियंत्रित शक्ति विनाश का कारण बन सकती है, जबकि संयमित शक्ति लोककल्याण का साधन बनती है। इस प्रकार गंगावतरण का यह प्रसंग भारतीय संस्कृति में शक्ति और मर्यादा के समन्वय का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करता है।

जब गंगा पृथ्वी पर प्रवाहित होती हैं, तब उनके वेग से महर्षि जह्नु का यज्ञ प्रभावित होता है। क्षणिक क्रोध के उपरान्त देवताओं और ऋषियों के अनुरोध पर जह्नु पुनः गंगा को प्रवाहित करते हैं, जिसके फलस्वरूप वह 'जाह्नवी' नाम से विख्यात होती हैं। इस प्रसंग का सांस्कृतिक आशय यह है कि भारतीय परम्परा में मतभेदों का समाधान संवाद, सम्मान और पुनर्समन्वय के माध्यम से किया जाता है। गंगा का नया नाम केवल एक पौराणिक घटना का परिणाम नहीं, बल्कि यह भारतीय संस्कृति की समन्वयवादी प्रवृत्ति का प्रतीक है, जो विविध परम्पराओं को आत्मसात् करके उन्हें अपनी सांस्कृतिक पहचान का अंग बना लेती है।

अन्ततः गंगा सगर-पुत्रों की भस्म का स्पर्श करती हैं और उनका उद्धार होता है। यह प्रसंग भारतीय संस्कृति में पितृऋण, स्मृति और पीढ़ियों के मध्य उत्तरदायित्व की भावना को अभिव्यक्त करता है। यहाँ गंगा केवल मोक्षदायिनी नदी नहीं, बल्कि अतीत और वर्तमान के मध्य सांस्कृतिक सेतु के रूप में प्रतिष्ठित होती हैं। इसी कारण गंगावतरण की कथा केवल धार्मिक आख्यान न रहकर भारतीय जीवन-दृष्टि में लोकमंगल, धर्म, उत्तरदायित्व और सांस्कृतिक निरन्तरता की स्थायी प्रेरणा बन जाती है।

उपसंहार

वाल्मीकीय रामायण में गंगा का स्वरूप बहुआयामी एवं बहुसांस्कृतिक है। महर्षि वाल्मीकि ने गंगा को केवल एक पवित्र नदी अथवा धार्मिक आस्था के केन्द्र के रूप में प्रस्तुत नहीं किया, बल्कि भारतीय जीवन-दर्शन, सांस्कृतिक चेतना तथा नैतिक मूल्यों की जीवनधारा के रूप में प्रतिष्ठित किया है। गंगा का त्रिपथगा स्वरूप, भगीरथ की तपस्या, शिव द्वारा गंगा का धारण, जह्नु ऋषि का प्रसंग तथा सगर-पुत्रों का उद्धार—ये सभी प्रसंग भारतीय संस्कृति के विविध आयामों को उद्घाटित करते हैं।

प्रस्तुत अध्ययन से स्पष्ट होता है कि गंगा भारतीय सभ्यता में धर्म और दर्शन, प्रकृति और संस्कृति, व्यक्ति और समाज, तथा लोक और परलोक के मध्य सेतु का कार्य करती है। वह पवित्रता की प्रतीक है, किन्तु उसकी पवित्रता केवल धार्मिक अनुष्ठानों तक सीमित नहीं है; वह नैतिक आचरण, सामाजिक उत्तरदायित्व तथा लोककल्याण की भावना से भी सम्बद्ध है। इसी प्रकार गंगावतरण का प्रसंग यह प्रतिपादित करता है कि महान परिवर्तन केवल दैवी कृपा से नहीं, बल्कि धैर्य, तप, समर्पण तथा सामूहिक उत्तरदायित्व से सम्भव होते हैं।

सांस्कृतिक दृष्टि से गंगा भारतीय समाज की एकात्म चेतना का प्रतीक है। उसके तटों पर विकसित तीर्थ, आश्रम, यज्ञ तथा ज्ञान-परम्पराएँ यह सिद्ध करती हैं कि गंगा ने भारतीय

संस्कृति के निर्माण और संरक्षण में केन्द्रीय भूमिका निभाई है। इसीलिए गंगा का महत्त्व किसी एक क्षेत्र, सम्प्रदाय अथवा काल तक सीमित न रहकर सम्पूर्ण भारतीय सांस्कृतिक परम्परा का अंग बन गया है।

समकालीन परिप्रेक्ष्य में भी *वाल्मीकीय रामायण* की गंगा-दृष्टि अत्यन्त प्रासंगिक है। पर्यावरणीय संकट, नदी-प्रदूषण तथा सांस्कृतिक विघटन के वर्तमान युग में यह महाकाव्य हमें प्रकृति के प्रति श्रद्धा, उत्तरदायित्व और संरक्षण की प्रेरणा देता है। गंगा के प्रति सम्मान का वास्तविक अर्थ केवल उसकी पूजा नहीं, बल्कि उसकी निर्मलता, अविरलता तथा सांस्कृतिक गरिमा की रक्षा करना भी है। अतः यह कहा जा सकता है कि *वाल्मीकीय रामायण* में गंगा भारतीय संस्कृति की जीवनरेखा, धार्मिक आस्था की आधारशिला, नैतिक आदर्शों की प्रेरणा तथा लोकमंगल की शाश्वत प्रतीक के रूप में प्रतिष्ठित है। यही उसकी स्थायी प्रासंगिकता है और यही इस अध्ययन का प्रमुख निष्कर्ष भी है।

समकालीन परिप्रेक्ष्य में वाल्मीकीय रामायण की गंगा : सांस्कृतिक विरासत एवं पर्यावरणीय चेतना

वाल्मीकीय रामायण में गंगा का स्वरूप केवल पौराणिक अथवा धार्मिक आस्था तक सीमित नहीं है। महर्षि वाल्मीकि ने गंगा को जिस श्रद्धा, पवित्रता और उत्तरदायित्व के साथ चित्रित किया है, वह वर्तमान समय में भी उतना ही प्रासंगिक है। आधुनिक युग में तीव्र औद्योगीकरण, नगरीकरण और प्राकृतिक संसाधनों के अनियंत्रित दोहन ने नदियों के अस्तित्व को गंभीर संकट के सम्मुख खड़ा कर दिया है। ऐसी परिस्थिति में *वाल्मीकीय रामायण* की गंगा-दृष्टि हमें यह स्मरण कराती है कि नदी केवल जल का स्रोत नहीं, बल्कि सभ्यता, संस्कृति और जीवन की आधारशिला है।

वाल्मीकि के वर्णन में गंगा के प्रति जो श्रद्धा दिखाई देती है, उसका आधार अन्धविश्वास नहीं, बल्कि प्रकृति के प्रति उत्तरदायित्व का भाव है। गंगा के तटों को तप, यज्ञ, अध्ययन और आध्यात्मिक साधना का केन्द्र बताया गया है। इससे स्पष्ट होता है कि प्राचीन भारतीय समाज में प्रकृति का उपयोग उपभोग की वस्तु के रूप में नहीं, बल्कि संरक्षण योग्य सांस्कृतिक धरोहर के रूप में किया जाता था। गंगा का सम्मान वस्तुतः उस जीवन-दृष्टि का सम्मान है, जिसमें मनुष्य स्वयं को प्रकृति का स्वामी नहीं, बल्कि उसका सहचर मानता है। यही दृष्टि आज के पर्यावरणीय विमर्श में 'सतत् विकास' (Sustainable Development) और 'पारिस्थितिक उत्तरदायित्व' (Ecological Responsibility) के रूप में पुनः प्रतिपादित की जा रही है।

गंगा के प्रति भारतीय समाज की आस्था ने केवल धार्मिक परम्पराओं को ही नहीं, बल्कि सामाजिक एवं सांस्कृतिक एकता को भी सुदृढ़ किया है। हिमालय से लेकर गंगासागर तक विस्तृत गंगा का प्रवाह विविध भाषाओं, जातीय समूहों और सांस्कृतिक परम्पराओं को एक सूत्र में जोड़ता है। इस दृष्टि से गंगा भारतीय सांस्कृतिक एकात्मता का भी सशक्त प्रतीक है। *वाल्मीकीय रामायण* में गंगा के प्रति व्यक्त श्रद्धा किसी एक राज्य, समुदाय अथवा सम्प्रदाय तक सीमित नहीं है; वह सम्पूर्ण आर्यावर्त की साझा सांस्कृतिक चेतना का प्रतिनिधित्व करती है। यही कारण है कि गंगा भारतीय सभ्यता की सांस्कृतिक स्मृति (Cultural Memory) का भी अभिन्न अंग बन जाती है।

समकालीन समाज में गंगा के संरक्षण का प्रश्न केवल पर्यावरणीय समस्या नहीं, बल्कि सांस्कृतिक उत्तरदायित्व का विषय भी है। यदि गंगा भारतीय जीवन-मूल्यों, धार्मिक संस्कारों और सांस्कृतिक पहचान की संवाहिका है, तो उसकी निर्मलता और अविरलता की रक्षा भी सामाजिक एवं नैतिक कर्तव्य है। *वाल्मीकीय रामायण* हमें यह प्रेरणा देती है कि प्रकृति का सम्मान केवल पूजा-पद्धतियों से नहीं, बल्कि उसके संरक्षण और संवर्धन से सिद्ध होता है। इस दृष्टि से गंगा का संरक्षण भारतीय सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण का भी पर्याय है।

महर्षि वाल्मीकि का गंगा-वर्णन यह भी स्पष्ट करता है कि मनुष्य और प्रकृति के मध्य सम्बन्ध उपयोगिता पर आधारित न होकर सह-अस्तित्व पर आधारित होना चाहिए। गंगा को 'लोकपावनी', 'भागीरथी', 'जाह्नवी' और 'त्रिपथगा' जैसे विविध नामों से सम्बोधित करना इस तथ्य का द्योतक है कि भारतीय संस्कृति ने प्रकृति को केवल भौतिक सत्ता नहीं माना, बल्कि उसे आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक गरिमा से भी विभूषित किया। यही कारण है कि गंगा के प्रति श्रद्धा भारतीय जीवन में नैतिक अनुशासन और पर्यावरणीय संवेदनशीलता दोनों को प्रेरित करती है।

वर्तमान समय में जब जलवायु परिवर्तन, जल-संकट तथा नदियों के प्रदूषण जैसी चुनौतियाँ वैश्विक चिन्ता का विषय बनी हुई हैं, तब *वाल्मीकीय रामायण* की गंगा-दृष्टि नई अर्थवत्ता प्राप्त करती है। यह ग्रन्थ प्रत्यक्ष रूप से पर्यावरण-विज्ञान की चर्चा नहीं करता, किन्तु प्रकृति के प्रति सम्मान, संतुलन और उत्तरदायित्व की जो सांस्कृतिक चेतना प्रस्तुत करता है, वह आधुनिक पर्यावरणीय नैतिकता के लिए भी प्रेरणास्रोत सिद्ध हो सकती है। इस प्रकार *वाल्मीकीय रामायण* में गंगा का स्वरूप अतीत की सांस्कृतिक धरोहर होने के साथ-साथ वर्तमान और भविष्य के लिए भी एक जीवन-दृष्टि प्रदान करता है।

उपसंहार

वाल्मीकीय रामायण में गंगा का स्वरूप बहुआयामी है। वह केवल एक नदी नहीं, बल्कि भारतीय धर्म, दर्शन, संस्कृति और लोकजीवन की जीवनधारा है। महर्षि वाल्मीकि ने गंगा के माध्यम से प्रकृति और संस्कृति, दैवी शक्ति और मानवीय पुरुषार्थ, धर्म और लोकमंगल तथा परम्परा और उत्तरदायित्व के मध्य गहरे सम्बन्धों को अत्यन्त प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त किया है। गंगा का त्रिपथगा स्वरूप, भगीरथ की तपस्या, शिव द्वारा गंगा का धारण, जाह्नवी प्रसंग तथा सगर-पुत्रों का उद्धार—ये सभी घटनाएँ भारतीय सांस्कृतिक मानस के विभिन्न आयामों का प्रतिनिधित्व करती हैं।

प्रस्तुत अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि *वाल्मीकीय रामायण* में गंगा का महत्त्व केवल धार्मिक श्रद्धा तक सीमित नहीं है। वह भारतीय सभ्यता की सांस्कृतिक निरन्तरता, नैतिक उत्तरदायित्व, लोककल्याण, समन्वय और आध्यात्मिक चेतना की प्रतीक है। महर्षि वाल्मीकि ने गंगा को जिस व्यापक दृष्टि से चित्रित किया है, उससे यह प्रतिपादित होता है कि भारतीय संस्कृति में प्रकृति के प्रति सम्मान केवल आस्था का विषय नहीं, बल्कि जीवन-पद्धति का अभिन्न अंग है। गंगा के प्रति श्रद्धा वस्तुतः उस सांस्कृतिक दर्शन की अभिव्यक्ति है जिसमें मानव, प्रकृति और दैवी सत्ता परस्पर पूरक माने गए हैं।

समकालीन संदर्भ में *वाल्मीकीय रामायण* का यह संदेश और भी अधिक महत्त्वपूर्ण हो उठता है। आज जब प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण, पर्यावरणीय संतुलन और सांस्कृतिक विरासत की रक्षा वैश्विक विमर्श का विषय है, तब गंगा के प्रति वाल्मीकि की दृष्टि हमें यह सिखाती है कि किसी नदी का वास्तविक सम्मान उसके सांस्कृतिक, आध्यात्मिक और पर्यावरणीय स्वरूप की रक्षा में निहित है। इसलिए *वाल्मीकीय रामायण* में गंगा का अध्ययन केवल अतीत के एक पौराणिक आख्यान का अध्ययन नहीं, बल्कि भारतीय जीवन-दर्शन की उस सतत् परम्परा का पुनर्पाठ है, जो आज भी मानव और प्रकृति के संतुलित सह-अस्तित्व की प्रेरणा प्रदान करती है।

संदर्भ सूची

(क) प्राथमिक स्रोत (Primary Sources)

1. वाल्मीकि. (वि.सं.). *श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण*। गोरखपुर: गीताप्रेस.
2. वाल्मीकि. (2017). *The Ramayana of Valmiki* (Vols. I–VII). General Editor: Robert P. Goldman. Princeton University Press.
3. *महाभारत.* (वि.सं.). गोरखपुर: गीताप्रेस.
4. *श्रीमद्भागवत महापुराण.* (वि.सं.). गोरखपुर: गीताप्रेस.
5. *स्कन्दपुराण* (काशीखण्ड). (वि.सं.). गोरखपुर: गीताप्रेस.
6. *पद्मपुराण.* (वि.सं.). गोरखपुर: गीताप्रेस.
7. *विष्णुपुराण.* (वि.सं.). गोरखपुर: गीताप्रेस.
8. *ऋग्वेद.* (सायणभाष्य सहित). वाराणसी: चौखम्बा संस्कृत सीरीज.

(ख) द्वितीयक स्रोत (Secondary Sources)

9. Eck, D. L. (2012). *India: A Sacred Geography*. New York: Harmony Books.
10. Goldman, R. P. (Ed.). (1984–2017). *The Ramayana of Valmiki: An Epic of Ancient India* (Vols. I–VII). Princeton University Press.
11. Kane, P. V. (1930–1962). *History of Dharmaśāstra* (Vols. I–V). Pune: Bhandarkar Oriental Research Institute.
12. Pollock, S. (2006). *The Language of the Gods in the World of Men*. Berkeley: University of California Press.
13. Radhakrishnan, S. (1951). *Indian Philosophy* (Vols. I–II). London: George Allen & Unwin.
14. Thapar, R. (2002). *Early India: From the Origins to AD 1300*. Berkeley: University of California Press.
15. Coomaraswamy, A. K. (1993). *Hinduism and Buddhism*. New Delhi: Munshiram Manoharlal.
16. Basham, A. L. (1954). *The Wonder That Was India*. London: Sidgwick & Jackson.
17. Narayanan, V. (2001). *Water, Wood, and Wisdom: Ecological Perspectives from the Hindu Traditions*. New York: Columbia University Press.
18. Klostermaier, K. K. (2007). *A Survey of Hinduism* (3rd ed.). Albany: State University of New York Press.
19. Zimmer, H. (1951). *Philosophies of India*. Princeton: Princeton University Press.
20. Eliade, M. (1958). *Patterns in Comparative Religion*. London: Sheed & Ward.
21. Singh, Upinder. (2008). *A History of Ancient and Early Medieval India*. Delhi: Pearson.
22. Sharma, C. D. (1960). *A Critical Survey of Indian Philosophy*. Delhi: Motilal Banarsidass.
23. Bhattacharya, N. N. (1999). *History of Indian Rituals*. New Delhi: Munshiram Manoharlal.
24. Bhattacharyya, H. (1956). *The Cultural Heritage of India* (Vol. IV). Kolkata: Ramakrishna Mission Institute of Culture.
25. Raghavan, V. (1979). *The Concept of the Sacred in Indian Tradition*. Chennai: Adyar Library.
26. Vatsyayan, Kapila. (1987). *The Square and the Circle of Indian Arts*. New Delhi: Abhinav Publications.
27. Pandey, K. C. (1963). *An Outline of Indian Philosophy*. Varanasi: Motilal Banarsidass.
28. Gonda, J. (1975). *Vedic Literature*. Wiesbaden: Otto Harrassowitz.
29. Brockington, J. L. (1998). *The Sanskrit Epics*. Leiden: Brill.
30. Hopkins, E. W. (1901). *The Great Epic of India*. New York: Charles Scribner's Sons.